रौशनी का दाखिला...

लखनऊ शहर का हर रास्ता घंटा घर की ओर मुड़ गया है। हजारों की तादाद में औरतों का बाहर आकर एहतिजाज करना ऐसा पहले कभी किसी आंदोलन में नही देखा गया। तारीख़ लिख रही हैं ये औरतें।

नाइश हसन

उसके बंद कमरे के दरवाज़े आहिस्ता-आहिस्ता खुलने लगे, उसमें दबे-पांव रौशनी दाख़िल होने लगी, यही रौशनी तो उसके हिस्से की रौशनी है। ये जिक्र है तारीख़ लिखती लखनवी ख़वातीन का।

लखनऊ अपनी तहजीब के साथ ही अपने जद्दोजहद के लिए भी तारीख़ी शहर है, ये बेगम हजरत महल और वाजिद अली शाह का भी शहर है, हसरत मोहानी और रशीद जहाँ का भी। यहाँ आज भी बड़ी तादाद में ख़वातीन (महिलाएं) समाजी कारकुन (सामाजिक कार्यकर्ता) के तौर पर काम कर रही हैं। यहाँ होने वाले अदबी, सियासी, तहजीबी प्रोग्राम इस शहर को एक जिंदा शहर बनाए रखते है। अपनी गंगा-जमुनी तहजीब को बचाए और बनाए रखना ये शहर ख़ूब जानता है। देश सहित दुनिया के तमाम नामचीन लोग यहाँ के प्रोग्रामों में शिरकत करते है। इस मायने में लखनऊ का मयार बहुत ऊँचा और काबिले तारीफ़ है।

अपनी उसी विरासत को आगे बढ़ाती औरतों ने जब सीएए के खिलाफ आवाज उठाई तो उसकी गूँज दूर तलक अपना असर छोड़ गई। शहर के कोने-कोने से औरतों का दाखिला घंटा घर पर जमा होने लगा। उनकी तादाद रोज बढने लगी। शहर का हर रास्ता घंटा घर की ओर मुड़ गया। हजारों की तादाद में औरतों का बाहर आकर एहतिजाज करना ऐसा पहले कभी किसी आंदोलन में नही देखा गया।

तारीख़ (इतिहास) लिख रही हैं ये औरतें। बड़ी तादाद में वो औरतें भी हैं जो अपने घरों से पहली बार निकली हैं, पुलिस की लाठी, और गालियां भी खा रही है, लेकिन दिन रात डटी है। ये सब किसी के इशारे पर नहीं हो सकता। ऐसा करने के लिए जिगर की ज़रूरत होती है।

जिन्होंने कभी चौखट न लाँघी हो वो एहतिजाज में कमान सम्हाल रही है। अपने बच्चों को गोद से चिपकाए, शदीद सर्द रातों में खुले आसमान के नीचे रह रही हैं, वो कितनी हिम्मतवर औरतें होगी। इसका अन्दाजा आसानी से लगाया जा सकता है। उनके हौसलों को सलाम पेश करना लाजमी है। हुकूमत जिन्हें मुल्क बदर कर देना चाहती है। वो अपने घर की हिफाजत और दस्तूर (संविधान) बचाए रखने के नारे लगा रही है।

नौजवान से लेकर उम्रदराज औरतों के नारे सुन कर आप के रोएं कांप जाएंगे। पढ़ी नहीं पर कढी हुई ये औरतें इस नामुनासिब निजाम को बदल डालने पर आमादा हैं। एक तरफ़ वो अपनी जिद की जद में सब कुछ ले आना चाहती हैं।

वाजिद अली शाह के लखनऊ में आज वाजिद बहुत याद आ रहे हैं, वो दौर जब सन् 1856 में उन्हें शहर बदर किया गया था, पूरी होशियारी के साथ बर्तानिया हुकूमत ने उनकी ताकत व उनके रूतबे को चूर-चूर कर दिया था और उन्हें कलकत्ता (कोलकाता) के मटियाबुर्ज भेज दिया था, उनसे जब ये शहर छूटा जा रहा था तो उन्हें इस शहर के दरो-दीवार अपनी तरफ खींच रहे थे। उनके दिल में एक कसक और गहरा सदमा भी था उस भावुक लम्हे में उन्होंने एक गीत लिखा बाबुल मोरा, नैहर छूटो ही जाए, अंगना तो पर्बत भयो और देहरी भयी बिदेस... उस गीत को इतने दर्द भरे अन्दाज में शुभा मुद्गल ने वाजिद के सेहन में (जो अब सीडीआरआई बन गया है) जब बैठ कर गाया तो दरो-दीवार ख़ामोश हो गए। वाजिद का दर्द सभी ने महसूस किया।

आज शहर ही नहीं मुल्क बदर किए जाने का फरमान जारी है। वाजिद के आशियाने को निहारती ये लखनऊ की औरतें अपने आशियाने के उजाड़े जाने की फिक्र में सड़कों पर हैं। वो ख़वातीन जो बाहर निकलने से भी डरती थीं उनकी दुनिया उनके घर तक महदूद थी, वो कह रही हैं कि घर ही न होगा तो दुनिया कहाँ होगी। साहिबे वक्त ने ये हुक्म किया है जारी कि अपनी नस्लों से कहो मेरे मुताबिक सोचें।

आते-जाते लोग ये सवाल भी कर रहे हैं कि मुसलमान औरतें ही ज्यादा तादाद में क्यों हैं ये तो सबका मामला है। सवाल वाजिब है और सच की तरजुमानी करता है। लगेगी आग तो उसकी जद में सभी आऐंगे लेकिन नागरिकता संशोधन कानून में हुकूमत ने मुसलमान को शामिल ही नहीं किया है। बड़ा नुकसान तो मुसलमानों का ही होगा। हुकूमत एक मजहब को कुचल देने पर आमादा है,जम्हूरी मुल्क को हिन्दू मुल्क बना डालने पर आमादा है। अपनी आईनी (संवैधानिक) जिम्मेदारी निभा पाने में पूरी तरह नाकामयाब है तो उससे अखलाकी जिम्मेदारी पूरी करने के बारे में सोचना भी बेमानी है।

ऐसे दौर में औरतों का एहतिजाज न सिर्फ लखनऊ-दिल्ली बल्कि पूरे मुल्क में नई इबारत रच रहा है। उसके मौन को नजरअन्दाज किया गया, अब उसके शब्द हुकूमत पर भारी पड़ रहे हैं। दबी आवाज़ें यकबयक रोष में बदल चुकी हैं, वो जवाब माँग रही हैं इस मुल्क के दस्तूर का हवाला देकर,वो हुकूमत से आँख में आँख मिलाकर सवाल कर रही हैं, और हुकूमत कह रही है ऐसा सबक सिखाऐंगे कि पुश्तें याद रखेंगी।

सरकारें असरकार आवाजों को अक्सर बरदाश्त नहीं करतीं। इन औरतों की आवाज़ें बहुत असरकार हैं। दुनिया में गूँज रही हैं, हुकूमत डर और बौखलाहट में कुछ भी कर देना चाहती है। ऐसे में गोरख पाण्डे की बात याद आ रही है वो हुकूमत के बारे में कहते थे %वो डर रहे हैं कि एक दिन निहत्थे और गरीब लोग उनसे डरना बंद कर देंगे।'

ये काली लाल चीटिंयाँ जो घंटाघर की तरफ बढ़ी चली जा रही हैं, तुम्हारी गोलियाँ अब कितनी चीटिंयों को मारेंगी, वो कुचलने वालों पर भी चढ़ जाएंगीं, वो खुद से वादाबंद हैं। वो चीटिंयां जिन्हें तुम पांव तले कुचलने का सोच रहे थे ये तुम्हारे लिए अब मुमकिन न हो पाएगा। अब तुम उनसे उनके ख्वाबों का सतरंगी हिन्दुस्तान नहीं छीन पाओगे।

इतना तो तय है कि इस आन्दोलन से कई सवालों को शिकस्त मिलेगी। रौशनी का दाख़िला अब घरों के भीतर भी होगा, कुछ न होगा तो भी 'हमारे भीतर का कायर तो टूटेगा ही', जम्हूरियत घर के भीतर भी कायम कर ले जाएंगी ये औरतें, पितृसत्ता की जकड़ को भी ढीला कर डालेंगी, ये आंदोलन बड़ा असर छोड़ जाएगा ऐसी आहट मिलने लगी है।

शाहीन बाग कर रहा है प्रजातंत्र को मजबूत, भारत को एक

डॉ. राम पुनियानी

इसमें कोई संदेह नहीं कि हमारी दुनिया में प्रजातंत्र के कदम आगे, और आगे बढ़ते चले जा रहे है। विभिन्न देशों में जहाँ ऐसे कारक और शक्तियां सक्रिय हैं जो प्रजातंत्र को मजबूती दे रहे हैं वहीं कुछ ताकतें उसे कमजोर करने की साजिशें भी रच रहीं है। परन्तु कुल मिलाकर दुनिया सैद्धांतिक प्रजातंत्र से असली प्रजातंत्र की ओर बढ़ रही है।

असली प्रजातंत्र में समानता, स्वतंत्रता और बंधुत्व केवल संविधान और कानून की किताबों तक सीमित नहीं रहते। वहां सभी नागरिकों को वास्तविक स्वतंत्रता और समानता हासिल होती है और लोगों के बीच सद्भाव और भाईचारा होता है।

भारत के प्रजातंत्रीकरण की शुरुआत आधुनिक शिक्षा और संचार व यातायात के साधनों के विकास के साथ हुई। महात्मा गाँधी ने सन 1920 में असहयोग आन्दोलन प्रारंभ किया जिसमें आम लोगों ने भागीदारी की। भारतीय स्वाधीनता आन्दोलन आगे चल कर दुनिया का सबसे बड़ा जनांदोलन बना।

भारत के संविधान का मूल चरित्र प्रजातांत्रिक है और वह प्रजातान्त्रिक मूल्यों से ओतप्रोत है। उसकी शुरुआत ही इन शब्दों से होती है, "हम भारत के लोग"।

हमारे संविधान और देश के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरु की नीतियों ने देश में प्रजातंत्र की जड़ों को मजबूती दी. सन 1975 में देश में आपातकाल लागू कर दिया गया। आपातकाल के दौरान जनता के प्रजातान्त्रिक अधिकारों का हनन हुआ। दो साल बाद आपातकाल हटा लिया गया और प्रजातांत्रिक अधिकार बहाल हो गए।

सन 1990 के दशक में राममंदिर आन्दोलन की शुरुआत हुई और यहीं से देश के प्रजातान्त्रिक चरित्र पर हमले भी शुरू हो गए। सन 2014 में केंद्र में भाजपा के शासन में आने के साथ, प्रजातान्त्रिक मूल्यों के क्षरण की प्रक्रिया में तेजी आई। नागरिक स्वतंत्रताओं, बहुवाद और सहभागिता पर आधारित राजनैतिक संस्कृति का ह्रास होने लगा।

सन 2019 में प्रजातंत्र के सूचकांक में भारत 10 स्थान नीचे खिसक कर दुनिया के देशों में 51वें स्थान पर आ गया। भाजपा की विघटनकारी राजनीति का प्रभाव देश पर स्पष्ट देखा जा सकता है।

इसके साथ ही, यह भी सही है कि पिछले कुछ समय से पूरा देश जिस तरह से सरकार के नागरिकता सम्बन्धी कानून में संशोधन करने के निर्णय के खिलाफ उठ खड़ा हुआ है उससे प्रजातंत्र को मजबूती मिली है।

दिल्ली के शाहीन बाग में चल रहा विरोध प्रदर्शन इसका प्रतीक है। यह प्रदर्शन 15 दिसंबर 2019 से लगातार जारी है. इस बीच, जामिया मिल्लिया इस्लामिया और अलीगढ मुस्लिम विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों के साथ पुलिस ने बर्बर व्यवहार किया और दिल्ली के जामिया नगर और आसपास के इलाकों में जनता की आवाज को दबाने के प्रयास हुए।

यह दिलचस्प है कि शाहीन बाग में चल रहे विरोध प्रदर्शन की शुरुआत मुस्लिम महिलाएं ने की। इनमें बुर्कानशीं महिलाओं के साथ-साथ ऐसी मुस्लिम महिलाएं भी शामिल थीं 'जो मुस्लिम महिलाओं जैसी नहीं दिखतीं'। धीरे-धीरे उनके साथ सभी समुदायों के विद्यार्थी और युवा भी जुड़ते चले गए।

यह आन्दोलन मुसलमानों द्वारा पूर्व में किये गए आंदोलनों से कई अर्थों में अलग है।

शाहबानो मामले, महिलाओं को हाजी अली दरगाह में प्रवेश देने और तीन तलाक को गैरकानूनी करार दिए जाने के विरोध में जो आन्दोलन हुए थे उनके पीछे मौलाना थे और प्रदर्शनों में दाढ़ी-टोपी वालों की भरमार रहती थी। उन आंदोलनों में मूल मुद्दा शरीअत और इस्लाम की रक्षा का था और उनमें केवल मुसलमान भाग लेते थे।

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने फरमाया था कि विरोध करने वालों को 'उनके कपड़ों से पहचाना जा सकता है'। मोदीजी को यह देख कर धक्का लगा होगा कि नागरिकता संशोधन अधिनियम (सीएए), राष्ट्रीय नागरिकता पंजी (एनआरसी) और एनपीआर के खिलाफ जो प्रदर्शन हो रहे हैं, उनमें ऐसे लोगों की बहुतायत है जो 'उनके कपड़ों से नहीं पहचाने जा सकते'।

ये विरोध प्रदर्शन इस्लाम या किसी अन्य धर्म की रक्षा के लिए नहीं हो रहे हैं। ये भारत के संविधान की रक्षा के लिए हो रहे है। इनमें जो नारे लगाये जा रहे हैं, वे केवल और केवल प्रजातंत्र और संविधान की रक्षा से सम्बंधित है। विरोध प्रदर्शनकारी नारा ए तकबीर अल्लाहु अकबर का नारा बुलंद नहीं कर रहे हैं। वे संविधान की उद्देश्यिका की बात कर रहे हैं। वे फैज अहमद फैज की कविता 'हम देखेंगे' को दोहरा रहे हैं। फैज ने यह कविता जनरल जिया-उल-हक के पाकिस्तान में प्रजातंत्र का गला घोंटने के प्रयासों की खिलाफत में लिखी थी।

प्रदर्शनकारी वरुण ग्रोवर की कविता 'तानाशाह आकर जायेंगें.... हम कागज नहीं दिखाएंगे' की पंक्तियां गा रहे हैं। यह कविता, सीएए-एनआरसी और वर्तमान सरकार के तानाशाहीपूर्ण रवैये के विरुद्ध सविनय अवज्ञा आन्दोलन चलाने की बात करती है।

भाजपा देश को बार-बार बता रही थी कि मुस्लिम महिलाओं की सबसे बड़ी समस्या तीन तलाक है। परन्तु मुस्लिम महिलाओं ने यह साबित कर दिया है कि मुस्लिम समुदाय के अस्तित्व को आसन्न खतरा उनकी सबसे बड़ी समस्या है। अन्य धार्मिक समुदायों के कमजोर तबके, गरीब और बेघर लोग भी यह समझ रहे हैं कि आज अगर दस्तावेजों के अभाव के नाम पर मुसलमानों की नागरिकता पर खतरा मंडरा रहा है तो कल उनकी बारी होगी।

यद्यपि यह आन्दोलन सीएए-एनआरसी पर केन्द्रित है परन्तु यह मोदी सरकार की नीतियों और उसके खोखले वायदों के खिलाफ जनता की आवाज भी है। विदेशों में जमा काला धन वापस लाने और युवाओं को रोजगार उपलब्ध करने के अपने वायदे पूरे करने में सरकार असफल रही है।

डॉ. राम पुनियानी लेखक आईआईटी, मुंबई में पढ़ाते थे और सन् 2007 के नेशनल कम्यूनल हार्मोनी एवार्ड से सम्मानित हैं नोटबंदी ने देश की अर्थव्यवस्था को तार-तार कर दिया है, जरूरी चीजों की कीमतें आसमान छू रहीं हैं और बेरोजगारों की फौज बड़ी होती जा रही है। इस सबसे बेपरवाह सरकार देश को बांटने में लगी हुई है। ये सभी मुद्दे आमजनों को आक्रोशित कर रहे हैं. यह आन्दोलन बिना किसी प्रयास के फैलता जा रहा है।

शाहीन बाग अब केवल एक स्थान नहीं रह गया है। वह श्रमिकों, किसानों और आम जनता की कमर तोड़ने वाली सरकार की नीतियों और वातावरण में नफरत का जहर घोलने के उसके प्रयासों के खिलाफ जनाक्रोश का प्रतीक बन गया है।

जहाँ राममंदिर, गोमांस, लव जिहाद और घर वापसी जैसे मुद्दे देश को बाँटने वाले हैं वहीं शाहीन बाग देश को एक कर रहा है। लोग जन गण मन गा रहे हैं, तिरंगा लहरा रहे हैं और महात्मा गाँधी, भगतसिंह, आंबेडकर और मौलाना आजाद की चित्र अपने हाथों में लेकर सड़कों पर निकल पड़े हैं। यह हमारे प्रजातंत्र के लिए गौरव का क्षण है। यह साफ है कि आम लोग किसी भी हालत में उस विरासात और उन अधिकारों की रक्षा करना चाहते हैं जो स्वाधीनता आन्दोलन और संविधान ने उन्हें दिए हैं।

यह बताना गैर-जरूरी है की बांटने वाली ताकतें और फिरकापरस्त तबका इस आन्दोलन के बारे में तरह-तरह के झूठ फैला रहे हैं. परन्तु हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि विरोध और असहमति प्रजातंत्र की आत्मा है। इस तरह के स्वस्फूर्त आन्दोलन जनता के सच्ची आवाज होते हैं. उनका स्वागत किया जाना चाहिए. हमारे प्यारे और न्यारे भारत की रक्षा ऐसे ही आंदोलनों से होगी। और वही हमारे संविधान और हमारे प्रजातान्त्रिक मूल्यों के दुश्मनों से हमें बचायेंगे।